REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 2 | NOVEMBER - 2018

भारतीय संस्कृति का आईना : भारत – भारती

डॉ. विनयकुमार एस. चौधरी
यशवंतराव चव्हाण महाविद्यालय, तुलजापुर (महाराष्ट्र).

प्रस्तावना :

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जीने आज से लगभग सौ वर्ष पूर्व 'भारत–भारती' में भारतीय संस्कृति के विभिन्न पक्षों का आवश्यकतानुसार संदर्भ दिया। कवि ने भारतीय संस्कृति के मूल बिंदूओं–सत्य, सदाचार, अतिथि–सत्कार, मानवीयता, अहिंसा, धर्माचार आदि की ओर इस रचना के माध्यम से भारतवासियों का ध्यान आकर्षित किया। मैथिलीशरण गुप्त ने भारत–भारती में भारतीय संस्कृति से संबंधित आस्था को व्यक्त किया है। भारतीय संस्कृति में गाय का महत्व बहुत अधिक है। गाय दूध देने के अलावा अन्य कार्यों में भी हमारी सहायता करती है। जैसे खेतों में हल चलाने वाले बैल गाय से ही मिलते है, गाय से प्राप्त पंचव्य मानव–मात्र के लिए अधिक लाभदायक है। कवि ने वैज्ञानिक तकनीकी उपकरणों के बढते प्रयोगों पर व्यंग्य किया है,

"यदि तुम कहो–अब हम कलों से काम लेंगे सभी।
तो पूछते हैं हम कि क्या वे दूध भी देंगी कभी।"[1]

गूप्त जी ने वैज्ञानिक तकनीकी उपकरणों के दूरगामी परिणाम पहले से जान लिए थे। आधुनिक समय में उपकरणों की महत्ता अधिक होने से भारतीय संस्कृति में गाय व बैलों की कमी होती चली गई। जहाँ गाय का शुध्द दूध, मक्खन, घी आदि प्राप्त होते थे वहाँ आधुनिक उपकरणों के तहत् मिलावटी दूध, घी आदि मिलते हैं जिससे व्यक्ति के स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव पड रहें हैं तथा नई–नई बीमारियाँ जन्म ले रही हैं। भारत–भारती में कवि ने भारतीय संस्कृति में बदलते हूए मूल्यों को चित्रित किया हैं। समाज में विवाह का बहुत अधिक महत्व हैं। विवाह होने के बाद नारी अनेक प्रकार के सुहाग चिहनों का प्रयोग करती है। मैथिलीशरण गुप्त ने भारतीय संस्कृति पर पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव को दिखाया है।

"वे चूडियाँ तक है विदेशी, देख लो बस हो चूका,
भारत स्वकीय सुहाग भी परकीय करके खो चूका।।"[2]

गुप्त जी ने पाश्चात्य संस्कृति का भारतीयसंस्कृति पर प्रभाव अधिक बताया है। भारतीय संस्कृति में नवीन–विचारों का प्रदुर्भाव हो रहा है। आधुनिक युग में विवाह संबंधी –मूल्यों का अर्थ ही बदल गया है। प्राचीन तथा मध्यकाल में नारी शादी होने के पश्चात् श्रृंगार के सभी उपादानों से अलंकृत रहती थी। आधुनिक युग में वह इन मान्यताओं को छोंडकर पाश्चात्य संस्कृति में इतनी रम गई है कि वह शादी होने के बाद भी कुँवारी दिखना चाहती है। विवाह संबंधी चिहनों का प्रयोग भी नहीं करती है जैसे चूडियाँ, सिंदूर आदि।

गुप्त जी ने धर्म के अलग–अलग मापदण्डों को भारत–भारती के माध्यम से व्यक्त करने का प्रयास किया है। भारतीयसंस्कृति में धर्म को सर्वोपरि माना है। प्राचीन ग्रंथों में धर्म की प्राप्ति से चारों फलों की प्राप्ति मानी जाती है। सुखों–दु:खों का भोगना मात्र धर्म पर ही निर्भर है। गुप्त जी धर्म के समर्थकों को इन फलों का ज्ञान देते हुए कहते हैं–

"निज धर्म का पालन करो, चारों, फलों कीप्राप्ति हो,
दुःख दाह, आधि–याधि सबकी एक साथ समाप्ति हो।"[3]

कवि मैथिलीशरण गुप्त ने भारत–भारती में देश–प्रेम में लीन चेतना को भी दृष्टिगत किया हैं। भारतीय संस्कृति में राष्ट्र को महत्व दिया जाता है। कवि का मन देश के प्रति त्याग बलिदान की भावना, से युक्त है।

"उन्नति तथा अवनति प्रकृति का नियम एक अखंड है,
चढता प्रथम जो व्योम में गिरता नहीं वही मार्तण्ड है
पर सोच है केवल वही वह नित्य फिरता ही गया,
जब से फिरा है दैव इससे नित्य फिरता ही गया।।"[4]

कहने का अभिप्राय यह है कि कवि राष्ट्र–प्रेमी है।राष्ट्र के प्राति उनका प्रेम उच्च स्तरीय है। आधुनिक समय में व्यक्ति राष्ट्र के प्रति मन में जिज्ञासा, चेतना, उत्साह का भाव दिखाई नहीं दे रहा है। वह वैयक्तिक स्तर पर केवल भावना को ही महत्व दे रहा है। देश के प्रति मर–मिटने की भावना आज व्यक्ति में नही है। भ्रष्टाचार फैल रहा है। उन्नति अब अवनति में बदल गई है। भारत देश ही एक ऐसा देश है। जिसमें अनेक संस्कृतियों का प्रादुर्भाव है। भारतीय संस्कृति में धर्म, परंपरा, रूढियों, विघटन, अंधविश्वास आदि अनेक मूल्यों को भी गुप्त जी ने 'भारत–भारती' में चित्रित किया है। समयानुसार व्यक्ति की सोच, विचार आदि सभी में परिवर्तन का भाव आ गया है।

"है सिध्दि मूल यही कि जब जैसा प्रकृति का रंग हो,
तब ठीक वैसा ही हमारी कार्य कृति का ढंग हो।
प्राचीन हो कि नवीन छोडों रूढियों जो हों बुरी,
बनकर विवेकी तुम दिखाओं हंस जैसी चातुरी।।"[5]

गुप्त जी ने वातावरण के अनुकूल व्यक्ति को बदलने की बात कही है। जीवन परिवर्तनशील हैं समय के साथ जीवन मूल्य में भी बदलाव आना स्वाभाविक है। पुरानी परंपराओं, कुरीतियों, रूढियों के साथ चलकर व्यक्ति विकास नही कर सकता। आधुनिक समय में व्यक्ति पूरानी रूढियों के साथ नहीं चल सकता। उसे समयानुसार बदलना होगा। विचार बदलेगे तो रूढियाँ भी बदलेगी। बौध्दिक विकास के साथ–साथ देश भी विकास करेगा। कवि ने रूढियों का विरोध किया है।

भारत–भारती में भारतीय संस्कृति में कर्म को भी सर्वेपरि माना है। कर्म व्यक्ति को जीवन में विकास की ओर अग्रसर करता है। कवि ने आधुनिक व्यक्ति की सोच को दृष्टिगत किया है। हम आज कर्म करने से पहले फल की इच्छा करते है। व्यक्ति के लिए गौण हो गया है, फल प्रधान हो गया। गुप्त जी ने समाज में रह रहे व्यक्तियों के प्रति भेदभाव का विरोध किया हैं जाति–पांति का विरोध किया। उनके लिए मानव महत्वपूर्ण हैं। उनमें से निम्न वर्ग का मर्मस्पर्शी वर्णन किया है। समाज पीडित निम्न वर्ग की आर्थिक स्थिति को चित्रित किया है। समाज राष्ट्र से जुडा हैं। समाज में व्यक्ति अनेक परस्थितियों से घिरा हुआ है जैसे बेरोजगारी, गरीबी व आर्थिक समस्याओं से जुडा हुआ है। गरीबी ने व्यक्ति के मन की इच्छाओं, आकंक्षाओं, स्वप्नों आदि पर जैसे अंकुश लगा दिया हो। व्यक्ति का जीवन आशाओं, निराशाओं, कुंठाओं से त्रस्त हो गया है। जीवन जीने की इच्छा खत्म हो गई है। कवि ने इन स्थितियों का ह्रदय विदारक चित्रण किया है–

"वह पेट उनका पीठ से मिलकर हुआ क्या एक है,
मानो निकलने को परस्पर हड्डियों में टेक है।
निकले हुए है दाँत बाहर, नेत्र भीतर है धँसे,
किन शुष्क आँतों में न जाने प्राण उनके है फँसे।
अविराम आँखों से बरसात आसूँओं का मोह है,

है लटपटाती चाल उनकी छटपटाती देह है।
गिरकर कभी उठते यहाँ, उठकर कभी गिरते वहाँ,
घायल हुए से घुमते है, वे अनाथ जहाँ–तहाँ।।"[6]

भारत–भारती में गुप्त जी ने समाज में व्याप्त अनेक आडंबर, स्वार्थ परायणता, रूढियों का विरोध, साधु–संतों की ढोंग–विधा आदि पर कटाक्ष किया है। वे सभी का मार्गदर्शन करते हुए कहते हैं–

"ब्राहमण बढावे बोध को, क्षत्रिय बढावे शक्ति को,
सब वैश्य निज वाणिज्य को त्यों क्षुद्र भी अनुरक्ति को।
यो एकमन होकर सभी कर्तव्य के पालक बनें,
तो क्या न कीर्ति विमान चारों ओर भारत का तनें।।"[7]

गुप्त जी ने 'भारत–भारती' में भारतीय संस्कृति की आड में लोग कैसे–कैसे अपने दुष्कर्मों को छिपाते है, इसका वर्णन किया है। व्यक्ति के संस्कार ही सामूहिक रूप से संस्कृति का निमार्ण करते हैं वही संस्कृति पुनः व्यक्ति में संस्कार भरती हैं कभी कभी अर्थ से अनर्थ भी हो जाता हैं।

"सोचो, हमारे अर्थ है यह बात कैसे शोक की,
श्री कृष्ण की हम आड लेकर हानि करते लोक की
भगवान को साक्षी बनाकर यह अंगोपासना,
हे धन्य ऐसे कविवरों को, धन्य उनकी वासना।।"[8]

प्रत्येक व्यक्ति को अपनी संस्कृति पर गर्व होता हैं समाज और संस्कृति का एक–दूसरे के बिना काम नहीं चल सकता। समाज का फलक विस्तृत है, समाज में जीवन की समग्रता आ जाती है। रीति–रिवाज, प्राकृतिक लोक–परिवेश आदि सभी इसमें समाहित है। मैथिलीशरण गुप्त ने 'भारत–भारती' में भारतीय संस्कृति के उज्ज्वल रूप का चित्रण तथा रूढियों, परम्पराओं, संस्कारों का विरोध कर नवीन मूल्यों की ओर उन्मुख होकर अपने कृतित्व को समृध्द किया है।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जी ने सौ वर्ष पहले का भारत और आधुनिक भारत का ब्यौरा बखूबी से चित्रित किया है। आधुनिक याने सुधरे हुए लोग, लेकिन हम सिर्फ लिबास और खान–पान से सुधरे है भौतिक सुविधाओं के भंवर में फंसे है। विचार से वैसे ही दकियानुसी। 'जो न देखे कवि' उक्तिनुसार गुप्त जी निःसंदेह दूरदृष्टि के दृष्टा कवि थे। भूत, वर्तमान और भविष्य का त्रिवेणी संगम भारत–भारती में समाया हुआ है। सौ वर्ष पहले की विचार धारा आज भी वैसे ही प्रवाहित है जैसे एक साल पहले की ताजा कृति हो। भारत की सभ्यता, संस्कृति, विवाह बंधन, धर्म का पालन, प्रकृति का रक्षण, गरीबी, अंधश्रध्दा, शोषण, देशप्रेम, त्याग, नीति, विधि, रूढी, परंपरा आदि का वर्णन किया है। कुलमिलाकर भारत–भारती कल, आज और कल, का आईना था, है और रहेगा।

संदर्भ संकेत–

1 से 8) भारत–भारतीः मैथिलीशरण गुप्त– पृ, 1077,103,103,03,160,98,167,121।

LBP PUBLICATION